जापान भारती

अंक ३ विक्रम संवत् २०५२ मई १९९५

इस अंक में

हमारा पन्ना

आपका पन्ना

प्रसंग

पर्व

सम्मान

कथा

कला

कविता

बचपन

প্রবন্ধ

কবিতা

संपादक

सौरभ सिंघल

संपादक मंडल

अखिल मित्तल

রন্জন গুপ্ত (रंजन गुप्त)

रंजन कुमार

सुशील कुमार जैन

पता

२०८, मैंशन न्यू ताकानावा

२-१०-१५ ताकानावा

मिनातो कू

तोक्यो १०८

फोन/फैक्स/ई-मेल

सौरभ : ०३-३४६२-०८५३

singals@ml.com

रंजन : ०३-३४७३-६०४३

ranjan@twics.com

सुशील : ०३-३८३२-१६४१

हमारा पन्ना

जापान भारती का तीसरा अंक आपके हाथ में है। जैसा हमने प्रथम अंक में ही स्पष्ट कर दिया था, यह जापान में रहकर भारतीय भाषाओं के माध्यम से अपनी जड़ों से जुड़े रहने का प्रयास है । इसका उद्देश्य भारतीय भाषा पढ़–लिख सकने वाले जापानी सज्जनों को भारतीय समाज व संस्कृति से परिचित कराना भी है।

इतना तो आप भी मानेंगे कि इस तरह का प्रयास समूचे समुदाय के सहयोग के बिना सार्थक नहीं हो सकता।

आप स्वयं या आपके परिचित, मित्र, बच्चे भारत या जापान से जुड़े किसी भी विषय पर कोई रोचक जानकारी, लेख, कहानी–किस्से, जापान में अपने अनुभव, चुटकुले, भारतीय–जापानी व्यंजन बनाने की विधियाँ लिखकर इस काम में हाथ बटाएँ।

विशेषकर अहिन्दी भाषी भारतीय पाठकों तक यह सन्देश पहुँचाएँ कि हमारे पास लगभग सभी भारतीय भाषाओं के लिए कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर उपलब्ध है। इस समय बांग्ला में प्रकाशन जारी है। इसी तरह अन्य भारतीय भाषाओं में रचनाओं का भी स्वागत है।

आपसे यही अपेक्षा है कि कम से कम इतना तो बताएँ कि पत्रिका नियमित रूप से आप तक पहुँच रही है या नहीं। उसके बारे में क्या प्रतिक्रिया है ? आशा है तीसरा अंक पढ़ते ही आप अपनी लिखित प्रतिक्रिया और आशीर्वाद अवश्य भेजेंगे।

- सौरभ सिंघल

आपका पन्ना

प्रिय सौरभ सिंघल जी,

आपको भी भारतीय नववर्ष की शुभकामनाएँ स्वीकार हों। मुझे भारती का प्रवेशांक व अंक दो प्राप्त हुए तथा यह जान कर कि जापान में भी ' हिन्दी ' भाषा में भारत, जापान व विश्व के बारे में जानकारी प्राप्त करने का साधन शुरू हो गया बहुत ही प्रसन्नता हुई, जिसका यश आपको, रंजन कुमार जी को व अन्य सलाह–सहयोगियों को मिलना चाहिए। मेरी खुशी की सीमा नहीं है। अगर मैं आपके या ' भारती ' के लायक कोई सेवा कर सका तो बहुत ही सौभाग्यशाली रहूँगा। जुग जुग जिए ' भारती ' ।

–बिशन चंद शर्मा, कोच्ची, जापान

(कलाकृति भेजने हेतु आभार ,आपके परिचय सहित उसे हम अगले अंक में प्रकाशित करेंगे–सम्पादक)

प्रिय बंधु,

आप लोगों ने भारत की स्मृतियों को मास–दर–मास तरो–ताज़ा करने का जो अपूर्व प्रयास किया है, वह प्रशंसनीय है। यह सदा याद रखने की बात है कि सफलता वह सीढ़ी है जिस पर हमें–आपको स्वयं चढ़ना–उतरना होता है, याँत्रिक सीढ़ी नहीं जो हमें आपको स्वयं चढ़ा ले जाए।

–जापान भारती का एक नियमित पाठक मनीष कुमार जैन,तोक्यो

प्रिय सौरभ,

जापान भारती की प्रतियां मिलीं। अच्छी शुरूआत है । मुझे लगता है कि यह सांस्कृतिक पत्रिका जापान में भारतीय समुदाय को निकट लाएगी । इसे आत्मनिर्भर बनाने के लिए तुम्हें कुछ संगठित होना होगा । शुभकामनाओं सहित ।

–डा.शशि कुमार,कम्प्यूटर विज्ञान विभाग,आई.आई.टी. दिल्ली

चीनी संस्कृति के प्रभाव में जापान में भी वर्ष क्रम १२ पशुओं से जुड़ा है । जापानी जनजीवन में इस वर्ष क्रम विशेषकर वानर वर्ष का महत्व हमारी चिर–परिचित

मिवाको कोएजुका की कलम से.....

ऐसा क्यों है? कैसे शुरू हुआ होगा ? इस सब का उत्तर किसी को मालूम हो न हो, किसी को पूरी जानकारी हो न हो, जापान में वर्ष १९९५, जंगली सुअर वाला वर्ष है।

संयोग से कोई गम्भीर समाचार नहीं था, नए वर्ष के शुभारंभ की खुशी थी, और क्योंकि माना जाता है कि जापान पूर्वी छोर का देश है जहाँ सब से पहले नया दिन खुलता है, तो अमरीका में टी॰वी॰ पर दिखाया गया कि जापान में तो नए वर्ष के आगमन की खुशी में जंगली सुअर का करतब भी देखने को मिला है। मैंने अपने जीवन में पहली बार जंगली सुअर को चक्के के बीच से छलांग लगाते हुए देखा।

१२ जानवर पारी–पारी से एक–एक वर्ष का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह विचार चीनी सभ्यता की देन है। हाँ, वियतनाम में जंगली सुअर की जगह पर पालतू सुअर वाला वर्ष चल रहा है। तो भी कोरियाई प्रायद्वीप में, चीन में, थाईलैंड में, और फिर अन्य अनेक देशों में चीनी मूल के लोगों के बीच सुअर वाला वर्ष चल रहा है। मगर पहली जनवरी को मात्र जापान में ही सुअर वाला वर्ष आरम्भ हुआ।

वर्ष आँकने वाले आरम्भ के विचार में जानवरों का समावेश नहीं था। मगर सुविधा को देखते हुए जानवरों वाली बात जोड़ी गयी।

कालान्तर में यह माना जाने लगा कि एक ही वर्ष में जन्मे लोगों का चरित्र, उसी वर्ष का प्रतिनिधित्व करने वाले जानवर की विशेषता से प्रभावित होता है। न केवल लोगों के चरित्र पर बल्कि सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक या अन्य भिन्न–भिन्न क्षेत्रों की गतिविधियों पर भी यह बात हावी होती है, यह माना जाने लगा।

यह अवश्य है कि हमारा जीवन, मौसम विशेष, प्रकृति विशेष या अन्य असंख्य ताने–बाने से बच नहीं सकता। महाविनाशकारी हानशिन भूकंप के पीड़ितों के लिए एक समान आधार बन चुका है। बात–बात में कहते हैं कि उससे पहले या उसके बाद, यानी १७ जनवरी से पहले तक या उस के बाद।

दसों वर्ष तक अनेक जापानियों के मुँह से यह बात निकलती थी, युद्ध से पहले और युद्ध के बाद। यानी १९४५ से पहले या उसके बाद। कुछ विशिष्ट मसलों में कहा जाता है कि प्राचीन राजधानी क्योतो के निवासियों के लिए युद्ध का मतलब "ओनिन नो रान" यानी "ओनिन वर्ष " वाले युद्ध से होता है। पन्द्रहवीं सदी में हुए दस वर्ष तक के युद्ध में क्योतो शहर पूरी तरह ध्वस्त हो गया था। उस के बाद योद्धाओं का घरेलू युद्ध आरंभ हुआ।

६ अप्रैल को तोक्यो महानगर के राज्यपाल के लिए श्री आओशिमा को चुना गया। ओसाका के लिए इसामु यमादा को चुना गया जिन्हें रंगमंच कलाकार वाले नॉक योकोयामा नाम से भी जाना जाता है। कहने का मतलब है कि दोनों का जन्म १९३२ में हुआ, बंदर वाले वर्ष में। दोनों को ही १९६८ में पहली बार संसद के ऊपरी सदन के सदस्य के लिए चुना गया। बंदर वाले वर्ष में ३६ वर्ष की आयु में।

भारी लोकप्रियता प्राप्त प्रसिद्ध उपन्यासकार शिनतारो इशिहारा को भी १९६८ में संसद के ऊपरी सदन के सदस्य के तौर पर पहली बार चुना गया, सर्वाधिक ३० लाख मतों के साथ। उन का भी जन्म बंदर वाले वर्ष, १९३२ में हुआ। और उन्होंने वानर वर्ष वाले राज्यपालों के चुने जाने के पाँच दिन बाद

संसद के निचले सदन में अपनी २५ वर्ष की सेवा के लिए सम्मानित होकर धन्यवाद का भाषण देते हुए सदन की सदस्यता से त्यागपत्र देने का एलान कर दिया।

साढ़े १२ करोड़ जापानियों में से कोई एक करोड़ लोग बंदर वाले वर्ष में पैदा हुए। इनमें से कोई तो इस वर्ष ६६ वर्ष का जीवन पूरा करने जा रहे हैं और कोई ८७, ७५, ६३, ५१, ३६, २७, १५ या ३ वर्ष ।

एक करोड लोग सब बंदर जैसे कैसे होंगे ? तो भी अधिकांश जापानियों की प्रवृत्ति ऐसी है कि हमारे राज्यपाल बंदर वर्ष में पैदा हुए . यह सुन कर बंदर के आकार को क्षण भर के लिए ही सही, अवश्य मन में अंकित करेंगे।

बंदर चतुर है, मानव जाति के बहुत निकट है, मगर बंदर, मानव जाति से कम है, केवल सिर के तीन बाल के लिए। हनुमान जैसा बंदर भी है। चीन में **साइयूकी(शी यौ ची)**", " **पश्चिम यात्रा विवरण** " नामक सोलहवीं सदी में लिखे गए उपन्यास के अनुसार बौद्ध धर्म के अध्ययन और बौद्ध ग्रंथ चीन में लाने के लिए भारत गए चीनी यात्री ह्यू एन सांग की सेवा में " **सोनगाकू (सून वो-कोंग)** " नाम का बंदर भी साथ भारत तक जाता है। वह उड़ता है, अपने प्रतिरूप निकाल सकता है। अपने सर्वशक्तिमान होने के उन्माद में उसने डींग मारी कि मैं दुनिया के छोर तक हो आया हूँ। वैसे वह तथागत की हथेली पर ही खेल रहा था।

तोक्यो महानगर के नए राज्यपाल श्री युकिओ आओशिमा ने १९८१ में एक उपन्यास प्रकाशित किया जिसे सम्मानजनक नाओकी साहित्यिक पुरस्कार प्राप्त हुआ। शीर्षक था," **निनगेन बानजि साइओ गा हिनोए उमा** "। उन्होंने चीनी लोकोक्ति, " **निनगेन बानजि साइओ गा उमा** " के साथ १२ जानवरों वाली बात जोड़ दी। चीनी लोकोक्ति में कहा गया है कि हमारा जीवन " **साइओ** " (सै दादा जी) के घोड़े की भाँति है। उस एक घोड़े ही के कारण उसके परिवार जनों को कितने दुख–सुख झेलने पड़ गए। हम नहीं जान सकते कि भविष्य में क्या होगा। वर्तमान की एक स्थिति आगे चल कर सुख लाएगी या पीड़ा, हमें क्या पता।

- मिवाको कोएजुका -
१-१०-६,किता-कासुगा-ओका,
इबाराकी,ओसाका

बुद्ध जयंती –१४मई

भगवान् गौतम बुद्ध का जन्म ५६३ ई॰पू॰ में वैशाख मास की पूर्णिमा की तिथि में हुआ था। कपिलवस्तु के राजा शुद्धोधन और महारानी मायादेवी उनके माता– पिता थे। महारानी ने 'लुम्बिनी' नामक स्थान में बुद्ध को जन्म दिया था। सिद्धार्थ बुद्ध के बचपन का नाम था। युवावस्था में राजकुमार सिद्धार्थ सत्य की खोज के लिए घर छोड़कर चले गए थे। उन्होंने 'गया' में बोध प्राप्त किया और तब से 'बुद्ध' कहलाए। बुद्ध भगवान् ने अहिंसा, समता, विश्वबन्धुत्व का उपदेश दिया जो दुनिया में बौद्ध–धर्म नाम से प्रचलित हुआ। वैशाख पूर्णिमा बौद्ध धर्मावलम्बियों के लिए परम पवित्र और महत्वपूर्ण दिन है। यह भगवान् बुद्ध की जयन्ती का दिन तो है ही, पर साथ ही यही वह दिन है जिस दिन उन्होंने बोधगया में बोध प्राप्त किया और यही वह दिन है, जिस दिन उन्होंने कुशी नगर में महानिर्वाण प्राप्त किया था। इस प्रकार भगवान् बुद्ध के जीवन की सभी प्रमुख घटनाएं इस तिथि से जुड़ी हुई हैं। यह भी माना जाता है कि उनकी पत्नी यशोधरा, उनके सारथि और उनके अश्व तक का जन्म इसी दिन हुआ था। बुद्ध जयन्ती का दिन होने से ही वैशाख पूर्णिमा 'बुद्ध पूर्णिमा' नाम से जानी जाती है। बारहवीं शताब्दी के कवि क्षेमेन्द्र ने भगवान् बुद्ध की जयन्ती पर होने वाले उत्सव का वर्णन किया है। अतः बुद्ध जयन्ती प्राचीन काल से ही मनाई जा रही है। इस दिन बौद्ध लोग भगवान् बुद्ध का स्मरण पूजन करते हैं। उनका ध्यान करते हैं। त्रिरत्न पूजा, वन्दना, दान, शील आदि पुण्य कार्य करते हैं। यह पवित्र तिथि सभी लोगों के लिए सदा स्मरणीय है।

डा.शशि तिवारी,
५४ साक्षर अपार्टमेंट्स,
ए-३,पश्चिम विहार,
नई दिल्ली-११००६३

निश्छल मुस्कान के धनी - प्रोफेसर हरभजन सिंह

पंजाबी के यशस्वी साहित्यकार डा. हरभजन सिंह भारतीय विविधता में एकता के मूर्तिमान प्रतीक हैं। १९१९ में सुदूर पूर्वी राज्य असम में जन्मने तथा मूल रूप से पंजाबी भाषी होने के बावजूद अंग्रेज़ी और हिन्दी में उनकी सशक्त लेखनी के प्रमाण हैं वह अनगिनत सम्मान और पुरस्कार जिन्होंने डा. हरभजन सिंह को अलंकृत कर स्वयं अपनी ही श्रीवृद्धि की है। लासाँ, तार तुपका, अधरैणी, टुक्कियाँ जैसी सशक्त रचनाओं के इस रचनाकार की नवीनतम काव्यकृति "रुख से रिशी" को हाल ही में के.के.बिड़ला फाउण्डेशन ने सरस्वती सम्मान प्रदान करने की घोषणा की है। इस अवसर पर सादर अभिनन्दन के साथ प्रस्तुत हैं डा. हरभजन सिंह के अनूठे व्यक्तित्व को उजागर करते प्रोफेसर ओम्प्रकाश सिंहल के कुछ अंतरंग संस्मरण :—

प्रोफेसर हरभजन सिंह के साथ मेरा संबंध सत्ताईस साल पुराना है। जब कभी उनके बारे में सोचता हूँ तो अनेक घटनाएँ, प्रसंग मानस–पटल पर चित्रवत् घूमने लगते हैं – उनकी कार्य–शैली के, पठन–पाठन के, लेखन के, विनम्रता के और सबसे अधिक चेहरे पर हमेशा बनी रहने वाली बच्चों की सी सहज, सरल और निश्छल मुस्कान के। मित्रों, सहयोगियों और अधीनस्थ लोगों द्वारा कभी–कभार कड़ी और कड़वी बात कह देने पर भी मैंने उनके चेहरे को गुस्से से लाल होते नहीं देखा बल्कि उन्हें प्यार से समझाते हुए पाया है। कद–काठ में हर तरह से छोटे आदमी को बराबर का दर्जा देते हुए आत्मीय ढंग से बात करते हुए ही पाया है, काम करने और आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करते हुए ही देखा है। डॉक्टर हरभजन सिंह की नितांत अपनी कार्यशैली है। दूसरों को काम सिखाने का अपना अलग अंदाज़ है। सन् १९६७ की बात है। उन दिनों वे दिल्ली के गुरू तेग़ बहादुर खालसा कॉलेज के हिन्दी विभागाध्यक्ष होने के साथ–साथ उपप्रधानाचार्य भी थे। मैं कॉलेज में नया–नया नियुक्त हुआ था – अकादमिक वर्ष के तीसरे सत्र के एकदम शुरू में यानी जनवरी मास में। इस सत्र में पढ़ाने का काम मुश्किल से एक मास चलता है। लेकिन डॉक्टर साहब सोचते थे कि यदि नए आए व्यक्ति को शुरू से ही कम काम करने की आदत पड़ गई तो फिर वह आगे चलकर एकदम आरामतलब हो जाएगा। ऐसा व्यक्ति कॉलेज के लिए किस काम का ? यह सोचकर उन्होंने मुझे वह क्लास पढ़ाने को दी जिसका केवल एक–चौथाई पाठ्य क्रम पूरा हुआ था। साथ ही हिदायत दे दी कि जैसे भी हो मुझे पाठ्यक्रम पूरा करना है – यदि अपने को असमर्थ पाऊँ तो उनसे बेझिझक कह दूँ, वे स्वयं अतिरिक्त कक्षाएँ ले लेंगे। समझदार को इशारा काफ़ी – मतलब साफ़ था कि यह पाठ्यक्रम मुझे अतिरिक्त कक्षाएँ ले कर पूरा करना है। उस कक्षा का एक पीरियड उन्होंने अपने पास भी रख लिया – कहने को यह पीरियड विद्यार्थियों की जिज्ञासाओं और शंका–समाधान के लिए था, किन्तु प्रकारांतर से इसका लक्ष्य यह जानना था कि सभी विद्यार्थी मेरी क्लास में जाते हैं या नहीं, जाते हैं तो संतुष्ट हैं अथवा असंतुष्ट। जब विद्यार्थियों ने विदाई समारोह के अवसर पर खिताब बाँटे और मुझे पढ़ाने में स्वर्ण पदक दिया तो मैंने उनके चेहरे पर जैसी खुशी झलकती देखी वह आजीवन नहीं भुला सकता।

एक और घटना लीजिए। नियुक्ति के कुछ दिन बाद की बात है। कॉलेज की महिला खो–खो टीम का अंतः कॉलेज प्रतियोगिता का फ़ाइनल था। डॉक्टर साहब ने मुझे अपने पास बुलाकर कहा कि टीम में तीसरे साल की हिन्दी आनर्स की छात्रा कृष्णा नारद खेल रही है।

बहुत ही अच्छी खिलाड़िन है। तुम्हें उसका उत्साह बढ़ाने के लिए मैच देखने जाना चाहिए मेरी हिम्मत न हुई कि मना कर दूँ।

खेल–स्थल पर पहुँचा तो देखा कि वहाँ कॉलेज के कुछ उद्दण्ड विद्यार्थी भी पहुँचे हुए थे। उन्होंने मुझे अचरज भरी निगाहों से देखा। कॉलेज के शारीरिक शिक्षा के निदेशक सरदार प्रीतम सिंह भी हैरान थे। कॉलेज के प्रिंसिपल स्व॰ सरदार जी॰एस॰बल खेल–प्रेमी थे। वह सभी टीमों के अधिकांश मैच देखने जाते थे। मुझे देखकर उन्होंने सिर्फ इतना ही कहा– " अच्छा, आप भी !" मैं मन ही मन डॉक्टर साहब की सूझ–बूझ की दाद दिए बिना न रह सका। उन्होंने प्रिंसिपल तथा खेल–निदेशक से नज़दीकी परिचय करने का सुयोग जुटाने के साथ–साथ अच्छे खिलाड़ियों, उनके समर्थकों–प्रशंसकों तथा उद्दण्ड माने जाने वाले विद्यार्थियों के साथ आत्मीय संवाद का खाता खोल दिया था। उपस्थिति मात्र से विद्यार्थियों के इस समूचे वर्ग ने यह मान लिया कि मैं उनका अपना आदमी हूँ। परिणाम यह हुआ कि कॉलेज की खेल–संचालन समितियों में मुझे हमेशा रखा जाता रहा। विद्यार्थियों से सदैव सहयोग और आदर मिलता रहा। प्रायः यह देखा गया है कि प्रशासन–कार्य से जुड़े व्यक्ति धीरे–धीरे अध्ययन–अध्यापन से मुँह मोड़ लेता है। लेकिन डॉक्टर साहब

की बात दूसरी थी। कॉलेज के उपप्रधानाचार्य होने के बावजूद उनका मन प्रशासन–कार्य से ज़्यादा साहित्य–साधना में रमता था। वे कॉलेज के अलावा विश्वविद्यालय के हिन्दी–विभाग में भी नियमित रूप से पढ़ाते थे। काव्यशास्त्र उनका प्रिय विषय था। उन दिनों दिल्ली विश्वविद्यालय में इस विषय के अधिकारी विद्वान प्रोफ़ेसर नगेन्द्र माने जाते थे। इसके बावजूद डॉक्टर साहब की धाक कम न थी। शब्दाडम्बर का परित्याग करते हुए विषय का सहज स्वच्छ प्रतिपादन करना कोई उनसे सीखे। जटिल गुत्थियों को लोक जीवन के दृष्टांतों से सुलझाते हुए विषय को पारदर्शी बनाने की उनकी अपनी शैली थी। भाषाविज्ञान उनका दूसरा प्रिय विषय था। दिल्ली विश्वविद्यालय में पंजाबी भाषा तथा साहित्य के प्रोफ़ेसर नियुक्त हो जाने के बाद इस दिशा में उनकी रुचि विशेष रूप से बढ़ी– इतनी अधिक कि उनकी हरदम यही इच्छा रहती कि पंजाबी साहित्य का अध्ययन करने वाले हर विद्यार्थी को भाषाविज्ञान के आधारभूत सिद्धान्तों और उसके अनुप्रयुक्त पक्षों का भरपूर अध्ययन करना चाहिये। यही कारण था कि वे अपने सहयोगियों तथा विद्यार्थियों को इसके नियमित अध्ययन के लिए निरन्तर प्रेरित करते रहे। साहित्य के भाषिक विश्लेषण पर पर्याप्त शोध–कार्य कराया। इतना अधिक कि पंजाबी आलोचना के हल्कों में यह 'पंजाबी आलोचना का दिल्ली विश्वविद्यालयीय

बहुत ही अच्छी खिलाड़िन है। तुम्हें उसका उत्साह बढ़ाने के लिए मैच देखने जाना चाहिए मेरी हिम्मत न हुई कि मना कर दूँ।

खेल–स्थल पर पहुँचा तो देखा कि वहाँ कॉलेज के कुछ उद्दण्ड विद्यार्थी भी पहुँचे हुए थे। उन्होंने मुझे अचरज भरी निगाहों से देखा। कॉलेज के शारीरिक शिक्षा के निदेशक सरदार प्रीतम सिंह भी हैरान थे। कॉलेज के प्रिंसिपल स्व॰ सरदार जी॰एस॰बल खेल–प्रेमी थे। वह सभी टीमों के अधिकांश मैच देखने जाते थे। मुझे देखकर उन्होंने सिर्फ इतना ही कहा– " अच्छा, आप भी !" मैं मन ही मन डॉक्टर साहब की सूझ–बूझ की दाद दिए बिना न रह सका। उन्होंने प्रिंसिपल तथा खेल–निदेशक से नज़दीकी परिचय करने का सुयोग जुटाने के साथ–साथ अच्छे खिलाड़ियों, उनके समर्थकों–प्रशंसकों तथा उद्दण्ड माने जाने वाले विद्यार्थियों के साथ आत्मीय संवाद का खाता खोल दिया था। उपस्थिति मात्र से विद्यार्थियों के इस समूचे वर्ग ने यह मान लिया कि मैं उनका अपना आदमी हूँ। परिणाम यह हुआ कि कॉलेज की खेल–संचालन समितियों में मुझे हमेशा रखा जाता रहा। विद्यार्थियों से सदैव सहयोग और आदर मिलता रहा। प्रायः यह देखा गया है कि प्रशासन–कार्य से जुड़े व्यक्ति धीरे–धीरे अध्ययन–अध्यापन से मुँह मोड़ लेता है। लेकिन डॉक्टर साहब

की बात दूसरी थी। कॉलेज के उपप्रधानाचार्य होने के बावजूद उनका मन प्रशासन–कार्य से ज्यादा साहित्य–साधना में रमता था। वे कॉलेज के अलावा विश्वविद्यालय के हिन्दी–विभाग में भी नियमित रूप से पढ़ाते थे। काव्यशास्त्र उनका प्रिय विषय था। उन दिनों दिल्ली विश्वविद्यालय में इस विषय के अधिकारी विद्वान प्रोफ़ेसर नगेन्द्र माने जाते थे। इसके बावजूद डॉक्टर साहब की धाक कम न थी। शब्दाडम्बर का परित्याग करते हुए विषय का सहज स्वच्छ प्रतिपादन करना कोई उनसे सीखे। जटिल गुत्थियों को लोक जीवन के दृष्टांतों से सुलझाते हुए विषय को पारदर्शी बनाने की उनकी अपनी शैली थी। भाषाविज्ञान उनका दूसरा प्रिय विषय था। दिल्ली विश्वविद्यालय में पंजाबी भाषा तथा साहित्य के प्रोफ़ेसर नियुक्त हो जाने के बाद इस दिशा में उनकी रुचि विशेष रूप से बढ़ी– इतनी अधिक कि उनकी हरदम यही इच्छा रहती कि पंजाबी साहित्य का अध्ययन करने वाले हर विद्यार्थी को भाषाविज्ञान के आधारभूत सिद्धान्तों और उसके अनुप्रयुक्त पक्षों का भरपूर अध्ययन करना चाहिये। यही कारण था कि वे अपने सहयोगियों तथा विद्यार्थियों को इसके नियमित अध्ययन के लिए निरन्तर प्रेरित करते रहे। साहित्य के भाषिक विश्लेषण पर पर्याप्त शोध–कार्य कराया। इतना अधिक कि पंजाबी आलोचना के हल्कों में यह 'पंजाबी आलोचना का दिल्ली विश्वविद्यालयीय

स्कूल' कह कर पुकारा जाने लगा। इसे संरचनात्मक आलोचना की संज्ञा भी दी गई। जिन दिनों डॉक्टर साहब इस दिशा में प्रवृत्त थे उन दिनों दिल्ली विश्वविद्यालय के भाषाविज्ञान विभाग में प्रोफ़ेसर रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव का वर्चस्व था। सैद्धांतिक तथा अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान के विविध पक्षों पर अचूक अधिकार होने के साथ–साथ विषय की सटीक एवम् प्रभावी अभिव्यक्ति में भी उन्हें अद्‌भुत महारथ हासिल था। लेकिन प्रोफ़ेसर हरभजन सिंह कभी उनसे उन्नीस नहीं ठहरे। मुझे अच्छी तरह याद है कि मुंशी प्रेमचंद की जन्म शताब्दी के अवसर पर हुई राष्ट्रीय संगोष्ठी में उन्होंने 'प्रोक्ति और पाठ' के संदर्भ में प्रेमचंद–साहित्य का जैसा सटीक विशलेषण किया था उसने प्रोफ़ेसर श्रीवास्तव के शिष्यों एवम् प्रशंसकों को कितना आश्चर्यचकित कर दिया था।

आलोचक प्रायः कवि–कर्म में असफल रहता है। मैथ्यू आर्नोल्ड की तो विश्वप्रसिद्ध उक्ति ही है – असफल कवि आलोचक होता है। लेकिन मैथ्यू आर्नोल्ड की यह उक्ति, प्रोफ़ेसर हरभजन सिंह पर कतई लागू नहीं होती। स्वातंत्र्योत्तर भारतीय कविता में जिन कवियों ने अपनी अलग पहचान बनाई है उनमें डॉक्टर साहब का अन्यतम स्थान है। अलख सुबह घर से दूर किसी सुनसान जगह पर निकल जाना – चाहे वह भूली भटियारी का महल हो या फिर कोई और जगह – डॉक्टर साहब का पुराना स्वभाव रहा है। दिल्ली जैसे शहर में रहते हुए प्रकृति के नैसर्गिक सौंदर्य की खोज एक तो वैसे ही आसान काम नहीं है और फिर आज का व्यस्त कामकाजी जीवन जंगली फूलों, झाड़ियों, शिलाओं, छोटे–बड़े पत्थरों या नन्हीं मुन्नी कंकरियों से बतियाने का अवकाश ही कहाँ देता है। पर डॉक्टर साहब की बात दूसरी है। मैंने अपनी आँखों से उनकी सुबह इन सबके साथ बतियाने से शुरू होती देखी है। एक बार डॉक्टर साहब ने बातों बातों में मुझे यह बताया था कि जंगली पहाड़ों और सर्वथा सुनसान जगहों में घूमने का शौक उन्हें बचपन से रहा है। प्रकृति के इस साहचर्य का उनकी कविता पर भरपूर प्रभाव पड़ा है। इसी ने उसे जहाँ एक ओर दार्शनिक पृष्ठाधर दिया है वहीं दूसरी ओर लोकगीतों की सी सहजता एवम् सादगी दी है। 'अधरैणी', 'सड़क दे सफे उत्ते', 'मैं जो बीत गया', 'ना धुप्पे ना छावें', 'अलविदा तों पहले' आदि काव्य–संग्रहों में यह वैशिष्ट्य अनायास देखा जा सकता है।

डॉक्टर साहब से परिचय होना आत्मीय संबंधों का स्थायी खाता खोलना है। आप इस खाते में रकम जमा करने में कितनी ही कंजूसी क्यों न बरतें किन्तु डॉक्टर साहब ऐसी कंजूसी भूल कर भी नहीं करते। डॉक्टर साहब को ऐसा करते देख एक न एक दिन आपको अपने पर शर्म आए बिना न रहेगी। और फिर आप धीरे–धीरे डॉक्टर साहब के अंतरंग वृत्त में शामिल हो जाऐंगे। अंतरंग वृत्त का सदस्य बन जाने पर आपको काम करने की नित नई प्रेरणा और ऊर्जा मिलेगी। ऊर्जा की ऐसी अजस्त्र धारा जिसने अब तक न जाने कितने हाथों को कलम पकड़ने के लिए मजबूर कर दिया है।

पिछले दिनों चीन में हुए भारत महोत्सव के अवसर पर उड़िया के प्रतिष्ठित कवि श्री रमाकांत रथ के नेतृत्व में भारतीय साहित्यकारों का एक प्रतिनिधि मण्डल आया था। उसमें शामिल थीं हिन्दी की युवा कवयित्री और डॉक्टर साहब की प्रतिनिधि कविताओं की हिन्दी अनुवादिका सुश्री गगन गिल। बातचीत के दौरान पता चला कि इन दिनों डॉक्टर साहब बीमार चल रहे हैं– इतने बीमार कि घर से बाहर नहीं निकल पाते। बाद में यह भी पता चला कि उन्हें पक्षाघात हो गया है। यह सब सुन कर मेरी आँखें नम हो उठीं, परदेस में रहना शूल सा चुभने लगा और दिल में रह रह कर हूक उठने लगी।

-प्रो.ओम्प्रकाश सिंहल
५, नार्थगेस्टहाउस,
पेइचिंग विश्वविद्यालय,
पेइचिंग, चीन

❀❀❀

आगामी व्रत और त्योहार

२६ मई–रवीन्द्र जयंती
२९ मई–सोमवती अमावस्या, वट सावित्री व्रत;
२ जून––गुरू अर्जुन देव बलिदान दिवस;
८ जून– श्री गंगादशहरा;
९ जून– निर्जला एकादशी ;
१३ जून–पूर्णिमा;

स्नोगेम्स

हरजेन्द्र चौधरी

मुझे पहले से ही लगता था कि ऐसा हो सकता है... होगा ...हो कर रहेगा। जब वह लड़की यहाँ थी तबसे। अब वह जा चुकी है तो सब सामने आ गया है। इस लड़के का दिमाग हिल गया है। बहकी–बहकी बातें करता है। कई बार फफक–फफक कर रो भी चुका है। पर उस लड़की को तो जाना ही था, चली गयी।

उस लड़की का जाना मेरी समस्या नहीं है। मेरी समस्या यह है कि यह लड़का बार–बार मेरे घर आ टपकता है और उस *'न्यूयॉर्क'* वाली लड़की के बारे में बातें करने लगता है। मैं तो इससे बिल्कुल आजिज़ आ गया हूँ। मैं भी अजीब कमज़ोर आदमी हूँ कि मैं उसे झिड़क नहीं पाता।

इसकी उपस्थिति में मुझे इस पर ठीक से गुस्सा भी नहीं आता। हाँ, इसके चले जाने के बाद मैं ज़रूर भुनभुन करता रहता हूँ कि मेरा इतना वक्त बर्बाद कर गया। उस दिन मैं पत्र भी पोस्ट नहीं कर सका।

खैर ! आप पहले मेरी पूरी बात सुनें। फिर मुझे बताएँ कि मुझे क्या करना चाहिए ...

देखिए, आप मेरी बात ध्यान से सुनिए। ये ना समझें कि मैं पी कर बकवास कर रहा हूँ। हम *'इंडियन सब कॉण्टिनेंट'* के लोग तो बिना पिए भी खूब बक–बक कर लेते हैं।...

खैर, आप पहले मेरी पूरी बात सुनिए फिर सलाह दीजिए। आपकी सलाह के मुताबिक आगे का रास्ता तय होगा। तो सुनिए,.......

उन दोनों से मेरा पहला परिचय परदेसियों की एक पार्टी में हुआ था। वह छोटा सा हॉल था। तरह–तरह की गंध और सिगरेट के धुएँ से भरा हुआ। भीतर की गंध एयरकंडीशनर और एक्ज़ॉस्ट के रास्ते बाहर फेंकी जा रही थी। हॉल में बेचैनी नहीं थी, केवल हल्की सी घुटन थी ! उसी माहौल में उनसे मेरा पहला परिचय हुआ था। उन दोनों को जापान आए लगभग एक महीना हुआ था। दोनों को साल भर जापान में रह कर जापानी भाषा पढ़ने के लिए 'मोंबुशो' वजीफा मिला था, जिसकी बदौलत वे यहाँ आए थे।

लड़की जितनी सुंदर और गोरी थी लड़का उतना ही काला और बदसूरत था।

लड़की ने अपना परिचय देते हुए अपने नगर का नाम बता डाला था *'आय अम अ न्यूयॉर्कर'*। लड़के ने अपने देश का परिचय दिया था – *'सर, आय अम फ्रॉम बांग्लादेश !'* उस हाथ की ऊष्मा और मज़बूती मैं अब भी महसूस कर सकता हूँ। मैंने बताया कि मैं भारतीय हूँ और यहाँ युनिवर्सिटी में पढ़ाता हूँ। औपचारिकता में दोनों को अपना विज़िटिंग कार्ड भी थमा दिया। लड़का बहुत प्रसन्न दिख रहा था। यहाँ तो भारतीय, पाकिस्तानी, नेपाली, श्रीलंकाई, बांग्लादेशी आपस में ही भाईचारा गाँठ लेते हैं, जैसे कि सब एक ही देश के रहने वाले हों।

'आर यू अ हिन्दू' –लड़की का सवाल मुझे बहुत अटपटा और अप्रासंगिक लगा था। *'यू केन से सो'*– मैंने बड़ा उड़ता सा उत्तर दिया था।

फिर हम एक–एक गिलास उठाकर अपनी–अपनी पसंद भरकर पीने लगे लड़का *'साके'* पी रहा था और लड़की को कोई 'हार्ड लिकर' पसंद आई थी। मुझ जैसे 'लक्कड़–हज़म,–पत्थर हज़म' आदमी के सामने जब वैरायटी हो तो फिर वैरायटी का मज़ा न लेना नामुमकिन है। मैं तो बारी–बारी से सब कुछ पी रहा था। कच्ची मछली के करीने से कटे हुए टुकड़े भी उठा–उठा कर चबाता जा रहा था। मई का पहला सप्ताह था और दो दिन से लगातार बूँदाबाँदी हो रही थी। कुल मिलाकर वह शाम–कम से कम मेरे लिए तो, ओसाका की एक मज़ेदार शाम थी।

....देखिए, आप मुझे बीच में मत टोकिए, प्लीज़ !.... अच्छा, मैं कुछ और संक्षेप में सुनाने का प्रयास करूँगा। तो सुनिए....

हाँ, तो उसके बाद वे दोनों कभी–कभी युनिवर्सिटी में आते–जाते दिख जाते थे। कभी अलग–अलग, कभी साथ–साथ। बाद के महीनों में

तो अधिकतर साथ ही युनिवर्सिटी के 'डॉर्मिट्री' (होस्टल) में रहते थे। अनेक बार इकट्ठे पकाते–खाते भी थे। कभी–कभार मुलाकात होने पर उन से बातें करने पर मुझे ऐसी सूचनाएँ मिल जाती थीं।

एक शाम समय तय करके वे मेरे घर आए। लड़की ने 'मानवता', 'भविष्य' वगैरा की बातें कीं, फिर 'ईश्वर' पर आई और फिर 'धर्म–चर्चा' करने लगी मुझे ऐसी बातों से या तो उबासी आने लगती है, या हँसी। लड़की सुंदर थी, इसलिए मैंने उबासी और हँसी दोनों की लगाम खींचे रखी। लड़की ने कुछ पैम्फलेट निकालकर मुझे दे दिए। बाइबिल, ईसा मसीह और उनसे जुड़े मानवीय भविष्य सम्बन्धी पैम्फलेट। मैंने उसे कहा कि मैं धर्म वगैरा में दिलचस्पी नहीं रखता। फिर आधी हँसी और आधी गंभीरता के साथ मैंने जोड़ा "पर हाँ, सुंदर लड़कियों और स्वादिष्ट भोजन में मेरी दिलचस्पी बहुत गहरी है। पुरुष के लिए स्वर्ग का निर्माण इन्हीं दो चीजों से होता है।"

लड़के ने इस बात पर इतना ऊँचा ठहाका लगाया कि मुझे अपने घर की दीवारों में कुछ थरथरी सी बजती महसूस हुई *"वेरी इंटेरेस्टिंग सर! हा हा हा ! हा हा हा !"* लड़की कुछ क्षण रुकी रही। केवल प्रतीक्षारत रुकी रही, वह हतप्रभ नहीं हुई थी।

मुझे लगा कि लड़की बहुत सधी हुई है और अपने मन में तय किए किसी मकसद को भूलती नहीं है। लड़की ने मुझसे पूछा, *" डु यु लाइक यॉर रिलीजन ?"* मैंने एक अनिश्चित मुस्कान फेंकी और उठ खड़ा हुआ "मैं आप लोगों के लिए कॉफी बनाता हूँ। दूध वाली लेंगे या बिना दूध की?"

उन दोनों की महीन और मोटी, अलग–अलग, आवाज़ें एक–दूसरी पर लिपटी हुई मुझ तक पहुँची । लड़के ने *"इंडियन कॉफी, सर!"* कहा, और लड़की ने, *"ब्लैक कॉफी, प्लीज़!"* मैंने लड़की के लिए *'ब्लैक कॉफी'* अलग से बनाई और हम दोनों के लिए ज़्यादा दूध और ठीक–ठाक चीनी वाली *' इंडियन कॉफी '* अलग से।

वह जनवरी के आखिरी हफ्ते की बहुत ठण्डी शाम थी। बाहर हल्की बर्फ़ गिर रही थी। मैंने धर्म–चर्चा के डर से मौसम की बातें आरम्भ कर दीं, "बहुत ठण्ड है।" लड़के ने कहा, *"येस सर! टू कोल्ड।"* 'ब्लैक कॉफी' का बारीक सा घूँट भरकर लड़की बोली ,– *"फ़ॉर मी, इट'ज फ़ाइन। आइ अम यूज्ड टु कोल्ड वैदर। आइ ऑलवेज़ इन्जॉय स्नोफ़ॉल एण्ड स्नोगेम्स।"*

मैं जापान में कई सर्दियाँ गुज़ार चुका हूँ, पर इतनी सर्दी मेरी आदत में अब तक शुमार नहीं हुई है। लड़के के लिए तो यह पहला ही इतना ठण्डा, इतना 'खून जमाऊ 'अनुभव था। दसेक दिन बाद युनिवर्सिटी के सालाना इम्तिहान आरम्भ होने थे। मैंने जब पूछा कि आप लोगों की तैयारी कैसी चल रही है तो उन्होंने उत्तर दिया कि उन्हें परीक्षा देने की ज़रुरत नहीं है। केवल भाषा सीखने आए हैं। लड़के ने बताया कि उसका वजीफ़ा 'एक्सटेंड' होने की संभावना है। एक साल और जापान में रहकर पढ़ने का अवसर मिलेगा। लड़की ने कुछ अनिश्चित सी बात की...वो शायद_एक–दो अप्रैल को लौट जाएगी... शायद अभी रुके... कुछ पक्का नहीं है ...

..... देखिए, आपने तो फिर बीच में टोक दिया। आपको ग़लतफ़हमी हो रही है कि मैं बहुत नशे में हूँ और बहक रहा हूँ। मेरा ख़्याल है कि मैं बहक नहीं रहा। ...ख़्याल ग़लत भी हो सकता है।.... आप बीच में निष्कर्ष न दें तो अच्छा होगा। प्लीज, पहले पूरी बात तो सुनिए.....

हाँ, तो फ़रवरी के मध्य तक परीक्षाएँ खत्म होने के बाद मेरा युनिवर्सिटी आना–जाना कम हो गया था। लाइब्रेरी या कम्प्यूटर का कोई काम होता तो चला जाता, नहीं तो घर पर ही कुछ पढ़ता–लिखता।

वो शायद अप्रैल के पहले हफ़्ते की दोपहर थी। मैं युनिवर्सिटी के अपने कमरे में कंप्यूटर पर पत्र टाइप कर रहा था कि अचानक लड़का वहाँ आया। उदास, बदहवास, अकेला। उसने आते ही पूछा कि क्या आप मेरे लिए दस–पंद्रह मिनट 'स्पेअर' कर सकते हैं। मैंने घड़ी पर नज़र डाली और उसे संकेत से सोफ़े पर बैठने को 'कहा'। मैंने चुपचाप काली कॉफ़ी के दो कप तैयार किए और एक उसे थमा दिया। इस बीच वह चुप बैठा रहा था। मेरे पास समय इतना कम था कि कुछ जानने की जिज्ञासा भी दब सी गई थी। तब ढाई बजे थे और साढ़े तीन बजे की आख़िरी डाक निकलने से पहले मैं चिट्ठियाँ 'पोस्ट' कर देना चाहता था। आवाज़ में ठंडापन भरके मैंने कहा *"येस ?"*

उसकी मोटी काली–सफ़ेद आँखों में नमी की एक परत आ गई थी और उसके बदसूरत होंठ कुछ काँप रहे थे। *"सर"* कहकर वह रुक गया। *"येस ! येस !"* मैंने उसे बोलने, और जल्दी बोलने के लिए उकसाया। *"सर, येस्टरडे शी लेफ़्ट फ़ॉर द युनाइटेड*

स्टेट्स" उसने ऐसे कहा जैसे कि किसी बहुत बड़े भूकंप की सूचना दे रहा हो।

– "तो ?" मैं किसी बहुत बड़े धमाके की उम्मीद नहीं कर रहा था । उसने लगभग रोते हुए से बताया कि एक्सटेंशन मिलने के बावजूद वो *'न्यूयॉर्कर'* वापस न्यूयॉर्क चली गई । " मैंने बहुत कहा कि एक साल और रहो।.....*बट शी प्रूव्ड टु बी अ वुमैन विद अ कोल्ड हार्ट!* जमी हुई खूबसूरत झील थी सर ! *नो इमोशंस, नथिंग।*" मैंने अपनी आवाज पर हमदर्दी का लेप लगाया . " उसने तुमसे कभी कोई वादा किया था ?"

– " शब्दों से तो नहीं सर, पर .... मैं तो यही समझ रहा था कि शायद मुझसे शादी करेगी। ..... *बट शी हैड अ वेरी कोल्ड हार्ट, इन अ वेरी वॉर्म बॉडी।*" लड़का अब तक उसके देह–पाश में जकड़ा हुआ–सा लग रहा था।

– "उत्तरी गोलार्द्ध के किसी ठंडे देश और ठंडे स्वभाव का कोई और व्यक्ति कभी तुम्हारा मित्र बना है?" . मैंने पूछा । "नहीं सर !" –लड़के ने कुछ अनिश्चय में पड़कर कहा।

–" कुछ और मित्र बनाओ। बार–बार धक्का लगेगा तो धक्का महसूस नहीं होगा।... *'स्नोगेम्स* इन्जॉय करना सीख जाओगे तो तुम भी अमेरिकी या जापानी बीयर के खाली डिब्बे की तरह किसी भी सम्बन्ध को चलते–चलते डस्ट–बिन में फेंक दिया करोगे ।"

– मैंने जितनी सहजता से यह बात कही,लड़का उतने ही आवेश में भर कर बोला

" नहीं सर ,ऐसा नहीं होना चाहिए ! ...नहीं होगा ! "

पता नहीं, होना चाहिए या नहीं, लेकिन ऐसा हो रहा है। धरती ठंडी होती जा रही है। .... हमारे देशों में भी विकास अकेला नहीं आएगा, अपना तमाम ठण्डापन साथ लेकर आएगा.....आ रहा है। इतना कहकर मैं फिर से, लड़के की उपस्थिति नकार कर कंप्यूटर पर पत्र टाइप करने लगा ।

प्रो.हरजेन्द्र चौधरी,
ओसाका विदेशी भाषा अध्ययन विश्वविद्यालय,
८-१-१, आओमातानी -हिगाशी मिनू शी,
ओसाका-५६२,जापान

कला

इकेबाना

पुष्प प्रकृति की मुस्कान है। परम सत्ता की असीम अनुकम्पा के प्रति प्रकृति के आभार प्रदर्शन का रूप है पुष्प । अपने श्रद्धेय के चरणों में पुष्प अर्पित करना भारतीय परम्परा का एक अंग है। छठी शताब्दी में जापान में बौद्ध–धर्म के प्रवेश के साथ यह परम्परा भी जापान पहुँची और कहा जाता है कि युवराज शोतोकु ने भगवान बुद्ध के चरणों में पुष्प चढ़ा कर जापान में इस परम्परा का आरम्भ किया।

बौद्ध–धर्म जीवहत्या का निषेध करता है। डाली से तोड़ लिए जाने के पश्चात फूल को मुरझाने में समय नहीं लगता। भगवान बुद्ध की इस अनुपम सृष्टि को उनके ही शृंगार के लिए नष्ट करना कहाँ तक उचित है ? क्या यह भी हिंसा का ही एक रूप नहीं है ? क्या पुष्प को जीवित ही भगवान के चरणों तक नहीं पहुँचाया जा सकता ? इसके उत्तर में जापान की उस कला का विकास हुआ जिसे कहते हैं इकेबाना अर्थात जीवित पुष्प। इकेबाना में पुष्प को डाली के साथ अपने नूल से पृथक कर इस प्रकार सजाया जाता है कि वह अधिक से अधिक समय तक ताजा रहकर अपना सौंदर्य बिखेरता रहे।

जापानी में कलाओं को सिद्धि तक पहुँचाने वाला मार्ग चीनी भावाक्षर में 'तो' या 'दो' पढ़ा जाता है, यथा जूदो, बुरिदो, केन्दो, सादो, चादो आदि। इसी क्रम में पुष्पों को सजाने संवारने की इस कला को 'कादो' की संज्ञा प्राप्त हुई।

इकेबाना को कला का रूप पन्द्रहवीं–सोलहवीं शताब्दी में प्राप्त हुआ। समय के साथ इसकी विकसित प्रमुख शैलियाँ हैं– इकेनोबो, ओहारा और सोगेत्सु।द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात आधुनिक इकेबाना केवल फूल पत्तियों और डालियों के प्रयोग तक ही सीमित नहीं रहा , अपितु प्लास्टिक, काँच, स्टील आदि का प्रयोग भी होने लगा है।

आज जापान में इकेबाना के लगभग ३००० स्कूल हैं और लगभग डेढ से दो करोड़ विद्यार्थी।यह कला आज जापान की सीमा लांघ कर विश्व की निधि बन चुकी है। १९५६ में तोक्यो में इकेबाना इण्टरनेशनल की स्थापना के पश्चात संसार के अनेक देशों में इसकी शाखाएँ फैल चुकी हैं । भारत में भी इकेबाना सीखने वालों की संख्या बढ रही है और भारत की सुरुचि सम्पन्नता में यह कला लोकप्रिय हो रही है।

--प्रो.सत्यभूषण वर्मा ,
जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

जापानी काव्य परम्परा में हाइकू शैली की अपनी अलग पहचान है । ५-७-५ वर्णों के क्रम में उस तीन पंक्तियों की हाइकू सांकेतिक अभिव्यक्ति है। हिन्दी कविता में इसका प्रयोग आम होता जा रहा है । प्रस्तुत हैं :—

डा. ओम विकास रचित हाइकू

प्रकृति बिम्बों पर आधारित

१. सिर उठाए
मेंढक नकारता
सिर झुकाना
(स्वाभिमान का संकेत)

***

२ जुते खेत में
ढूंठ पर बैठी तके
शिशु गौरय्या

***

३. है लक्ष्य दूर
चिड़िया उड़ जाती
श्रम खोकर

***

४. वर्षा की बूंदे
पंखों को भिगोकर
उड़ान रोकें

***

५. उदास मुख
पुत्र को देखकर
मौन रो पड़ा ।

***

सामाजिक व्यवहार पर आधारित

१. तब दास था
अब स्वतंत्र हूँ
अतः शाँत हूँ
(स्वतंत्रता की महत्ता)

***

२. मात्र संयम
प्रकृति संतुलन
रख सकेगा ।

***

३. जापानी झुकें
कितने दृढ़ तुम
सनम्र देखें ।
(जापानी अभिवादन परम्परा में
छिपी नम्रता और दृढ़ता के प्रति
हास्यमय संकेत)

***

४. मत उबलो
दूध की भाँति शांत
किए जाओगे

***

– डा. ओम विकास
भारतीय दूतावास,तोक्यो

सुनो कहानी

किसान और उसका गधा

एक किसान अपने बेटे के साथ अपना गधा बेचने बाज़ार जा रहा था। वह अपने गधे को अच्छी हालत में रखना चाहता था ताकि उसे खरीदार से अच्छी कीमत मिल सके। इसलिए उसने गधे को गाड़ी पर चढ़ाया और स्वयं गाड़ी खींचने लगा।

कुछ राहगीरों ने जब यह देखा तो चिल्लाए " देखो, देखो ! गधे की सवारी करने की जगह गधे को सवार कर रखा है। तुमने आज तक किसी को ऐसी बेवकूफी करते देखा है? "

यह सुनकर किसान रुक गया और कुछ सोचने लगा फिर गधे पर सवार हो गया। उसका बेटा उसके पीछे– पीछे चल रहा था।

रास्ते में उसने कुछ स्त्रियों को कहते सुना " देखो तो इतना सेहतमंद आदमी है फिर भी खुद तो गधे पर सवार है और बेचारे बेटे को पैदल चलारहाहै।"

यह सुन कर किसान फिर रुक गया और अब की बार अपने बेटे को गधे पर बिठा कर स्वयं पैदल चलने लगा।

कुछ आगे जाने पर एक राहगीर बोला " कितनी शर्म की बात है ! बेटा गधे की सवारी कर रहा है और बेचारा बूढ़ा बाप पैदल चल रहा है।"

इतना सुनते ही किसान ने फैसला किया कि वह दोनों ही गधे पर सवार होकर जाऐंगे।

थोड़ी देर बाद कुछ नवयुवक उनके पास से गुज़रे। एक युवक ने किसान से कहा " तुम्हें शर्म आनी चाहिए। तुम इस मूक पशु से इतना बोझ उठवाते हो और इसे कष्ट पहुँचाते हो। "

यह सुनकर किसान आग– बबूला हो गया और चिल्लाया " मैं अब किसी की बात नहीं मानूँगा। केवल अपने मन की करूँगा।"

यह कहकर वह आगे चल दिया।

----प्राची

बूझो तो जानें !

१. कभी इधर से आते हम ,
कभी उधर से जाते हम ,
खाली रहते तो मुँह फाड़े ,
अपना पैर दिखाते हम ।

❖❖❖❖

२. क्या जानूं यह कैसा है ,
जैसा देखा वैसा है ,
मतलब उस का बूझेगा ,
मुंह देख तो सूझेगा।

❖❖❖❖

३. काली हूँ मैं गहरा पेट ,
मेज़ पर मैं जाती बैठ ,
लोग मारते मुंह पर भाले ,
लिखते अक्षर नीले काले ।

❖❖❖❖

४. राजा को आए तो वैद्य बुलाए ,
चोर को आए तो पकड़ा जाए ।

❖❖❖❖

उत्तर : जूते, दर्पण, दवात, खांसी

देखो हँस न देना

एक आदमी : यहां से बस अड्डा जाने में कितनी देर लगती है?

दूसरा आदमी: वैसे तो आधा घंटा लगता हैं लेकिन अगर मेरे कुत्ते ने तुम्हें देख लिया तो दस मिनट ही लगेंगे ।

****

भूगोल का अध्यापक : भारत की दो प्रसिद्ध खानों के नाम बताओ?

राजू : सर, आमिर खान और सलमान खान ।

****

रजत : अरे! कमल, कहाँ भागे जा रहे हो ?

कमल : मुझे नौ बजे की बस लेनी है ।

रजत : मगर नौ बजने में तो अभी दो घंटे बाकी हैं ।

कमल : अरे, रास्ते में तुम जैसे लोग भी तो रोकेंगे।

— मानस

জাপান এখন আর তখন

- সীতা রায় -

বার বার লিখছি - কাটাকুটি করছি - কাগজ ছিঁড়ে ফেলছি . কিন্তু লেখা হচ্ছে না। আসলে বিষয় নিয়েছি অদ্ভূত - জাপান এখন আর তখন। ইচ্ছে করলে গুরুগম্ভীর ভাবে সময়ের বিস্তৃতি মেপে একটা বিরাট বই লিখে ফেলা যায়। আমাকে হাল্কা দুচার কথায় শেষ করতে হবে। বিপত্তি সেখানে।

এদেশে আসবার আগে নিজের অজান্তে দেশটা সম্বন্ধে একটা ধারণা হয়ে যায়। অবশ্য লোকের মুখে শুনে আর বই পড়ে সে ধারনা। তার সংগে বাস্তবের মিল থাকা সম্ভব নয়। অন্যের চোখ দিয়ে দেখা আর আমার দেখায় তফাৎ থাকবে। আর থাকবে সময়ের ব্যবধান। তারা দেখেছেন তখনকার জাপান। বিশেষ করে রবীন্দ্রনাথ ঠাকুর ষাট সত্তর বছর আগে যে জাপানকে দেখেছিলেন তারপরে এখনকার জাপানে অনেক পরিবর্তন। মাঝখানে একটা গোটা বিশ্বযুদ্ধের সমুদ্র। তার জল রক্তে লাল - মিশেছে আনবিক বোমার গলিত অণু। তবুও আবার করে গড়ে উঠেছে দেশটা। যার মূল কাঠামোতে রয়েছে জাপানীদের চরিত্রবল। সে কথা যাক। কথা ভারী করবোনা। রবি ঠাকুরের চোখে কয়েকটা বৈশিষ্ট্য ধরা পড়েছিলো সেই সময়। তার কতটা এখনও অক্ষত আছে সেটা দেখার বিষয়। শান্ত, কোলাহলহীন দেশটাকে ওঁর ভালো লেগেছিলো।

ভলো লেগেছিলো এদের পরিষ্কার পরিচ্ছন্নতা, সেবাপরায়ণতা আর সৌন্দর্যবোধ। সৌন্দর্যবোধের আধার হয়তো বদলে গেছে - কিন্তু দেখার ক্ষমতা বদলায় নি। আরও তীক্ষ্ণ হয়েছে, আরও বিস্তারিত হয়েছে। আর পরিষ্কার পরিচ্ছন্নতা এদের বোধহয় ব্যধির পর্যায় পড়ে গেছে। তার থেকে মুক্তি নেই। অনেকটা সূচিবায়ুগ্রস্থ বিধবার মতো। বারবার হাত পরিষ্কার করা আর চটি জুতো বদলানোতে তার পরিচয়। রবিঠাকুর বলেছিলেন- এরা এতোই

চুপচাপ থাকে বুঝি বা এদের বাচ্চারাও কাঁদেনা।

বাস্তবিক পথেঘাটে এদেশের মায়েদের কচি বাচ্চাদের বুকে পিঠে বেঁধে যখন নিয়ে যেতে দেখি তখন কাউকে কাঁদতে দেখিনা। তাই বলে কি তারা মোটেই কাঁদে না? তা নয় নিশ্চয়ই। কিন্তু পথচলতি লোকেদের মুখে - ধাক্কা লাগলে কোনো তর্কাতর্কি নেই, বচসা নেই , ভাবা যায় না। কবিও নজর করেছিলেন - দুই যাত্রীর ধাক্কা লাগলো- একে অন্যকে দোষারোপ না করে দুজনে দুজনকে অভিবাদন করে যে যার কাজে চলে গেলো। আমার জাপান বাসের প্রথম অভিজ্ঞতায় এরকম একটি ঘটনা চোখের সামনে দেখেছিলাম। একটি সরু গলিতে দুই বৃদ্ধা দাঁড়িয়ে কথা বলছিলেন। দুদিক থেকে দুটি সাইকেল আসছিল। একজন অন্যদিকে তাকিয়েছিলো। আরেকজনকে দেখতে পায়নি। এ ভাবছে ও দেখতে পাবে, তাই গতি কমায় নি।

অবধারিত সংঘর্ষে দুজনে পড়লো দুই বৃদ্ধার ওপর। আশ্চর্য - চার জনে উঠে গোমেন্ না সাই গোমেন না সাই বলে মাপ চাইতে লাগলো। বকাবকি নেই, ঝগড়া ঝগড়ি নেই। বৃদ্ধাদের ভাবখানা যেন পথের ধারে দাঁড়ানো তাদের মস্ত অপরাধ।

এই যে কথায় সময় নষ্ট না করে সবাই নিজের কাজে চলে যাওয়া এইটি জাপানীদের বৈশিষ্ট্য। একটি বিশেষ গুণ তো বটেই। এ গুণ তখনও ছিলো, এখনও আছে। তবে গুরুজনদের প্রতি শ্রদ্ধা দেখানোর রীতি এখন অনেক কমে গেছে। দেখা দিয়েছে উপেক্ষা। আগেকার ভদ্রতা বা শিষ্টাচারও নিম্নগামী। নবীনরা উচ্ছল আর দুর্বার।

অবজ্ঞা করতে তাদের অবাধ অধিকার। এদের অবদান - হট্ রজার্স। এরা বিকট আওয়াজের মোটরবাইক নিয়ে দল বেঁধে ঘুরে বেড়ায় - স্পোর্টস্ কারে ক্যাচ্ করে শব্দ তুলে স্টার্ট নেয় - এক কথায় আওয়াজ করার জান্তব প্রবণতা। রবি ঠাকুর এদের দেখলে কি বলতেন জানিনা। এক অবসরপ্রাপ্ত পুলিশ অফিসার অভিযোগ করতে গিয়ে ছুরির আঘাতে মারা গেছেন বলে শুনেছি। যে বা যারা ছুরি মেরেছে তারা নিখোঁজ। পত্র পত্রিকায় ঝড় ওঠে। বিকট শব্দের মোটর বাইক বন্ধ করা হোক - সরকার শব্দের উচ্চগ্রামের সীমা বেঁধে দিক - পুলিশ তার তৎপরতা বাড়াক - কত কি। বাইকের নির্মাতারা বল্লে, ঐ শব্দের জন্যেই তো আমাদের বিক্রী। সে তো কমানো যায় না। সরকার অবাধ ব্যবসায় বিশ্বাসী। তারা বল্লে, আমরা অনুরোধ করতে পারি, নির্মাতাদের ব্যবসায় বাধা দিতে পারি না। বাণিজ্যে চূড়ামণি হলে চারিত্রিক

বৈশিষ্ট্য বিকিয়ে দিতে হয়। নিস্তব্ধতার জায়গায় এসেছে চিৎকার। মাইকেল জ্যাকসনের মতো মাইক হাতে নেচে নেচে গানের নামে চিৎকার, অনেকে সহ্য না করলেও বাজারে চলছে। এখনকার জাপানের বাজারী কৃষ্টি।

মেয়েদের সেবা দেখে বিশ্বকবি মুগ্ধ হয়েছিলেন। পরিচ্ছন্নতার প্রতিমূর্তি। মুখে কথা নেই। নীরবে সকলের যত্ন করে যায়। এদের দেখে তাঁর ইচ্ছে হয়েছিলো এরকম এক সেবিকাকে দেশে নিয়ে যেতে। যদিও কথার কথা। তবুও ছবির মতো সেই সব মেয়েরা - নিঃশব্দ আর সুন্দর, ঠিক কনফুশিয়াসের কথা মতো। মেয়েরা হবে দেখার যোগ্য, শোনার জন্যে নয়। কম বেশী সব প্রাচ্য দেশে মেয়েদের ভূমিকার এই লক্ষ্য। কিন্তু কনফুশিয়াসের আপন দেশে সে পাট উঠে গেলেও জাপানে এই সেদিনও সে ভাব বজায় ছিলো। আমি এসেও দেখেছি। কিন্তু আজকের শিন্ জিন্ রুই অর্থাৎ এই প্রজন্মের বেচালদের ভাবগতিক অন্যরকম। এরা এখন স্কুলে পড়তে পড়তে পার্টটাইম কাজ করছে।

পড়া শেষে চাকরী। অনেকে বিয়ে করে না, কারণ বিয়ে করলে স্বামীর ইচ্ছেয় চাকরী ছাড়তে হবে - কখনও বা কর্তৃপক্ষরাই বরখাস্ত করে দেবেন। সোজাসুজি নয়, আকারে ইংগিতে চলে যেতে বাধ্য করবেন। এটাও জাপানের পুরোনো কথা। এখনকার জাপান একটু পাল্টেছে। নবীন, নবীনারা দুজনে কাজ করে - ডিনক্স্ অর্থাৎ ডাবল ইনকাম নো কিড্স এ বিশ্বাস করে। উল্লেখযোগ্য, জাপানে বিয়ে না করা'দের সংখ্যা নেহাৎ কম নয়।

রবিঠাকুর তখনকার যে বাচ্চাদের দেখে বলেছিলেন যে তারা বোধহয় কাঁদেওনা, সেই বাচ্চারা আজ ষাট সত্তর বছরের বয়স্ক, তাঁরা কি এসব দেখে এখনও কাঁদেন না?

- সীতা রায়

হিলটপ হাউস,
১-২২-৩-১০১
মিনামি মাগোমে,
ওতাকু, তোকিও

সৎপাত্রী

শুনতে পেলাম দিল্লী গিয়ে
দিচ্ছ নাকি ছেলের বিয়ে ?
বৌ করে নাও রামধনুকে
পুত্র তোমার থাকবে সুখে।
রং কীরকম? বেশ ঝাঁজালো,
লক্ষ ওয়াটের নিয়ন আলো।
আর যেন ভাই শ্রীমুখখানি
রম্ভা + ভেনাস + নূরজাহানি।
তন্বী দেহ, যদিও পেশী
সাধারণের একটু বেশী।
আসল কথা কি তা জানো,
মেয়ের হবিই চোর ঠ্যাঙানো।
প্রণাম-টনাম? ভয়ই করে
ঠ্যাঙের খোঁজে ঝাঁপিয়ে পড়ে!
সদাই হাসি মুখটি জুড়ি
দিচ্ছে যেন কে সুড়সুড়ী -
আর হ'লে joke, হোক না বাসি,
বাপরে সে কি অট্টহাসি!
গান? যদি গায়, তার রেওয়াজে
পাড়ার বুকে ডঙ্কা বাজে।
বিদ্যে? মেয়ের বায়োডাটা
সেরেফ Ph.D - তেই আঁটা!
গণিত, Physics, বঙ্গভাষা
ইত্যাদিতে মগজ ঠাঁসা !
রান্না? শোনো, Chemistry তে
খেতাব পেয়েই আচম্বিতে
যেই না বোঝা, রসনাকে
রসায়নই খেলিয়ে থাকে,
ফেলল গড়ে বলিহারি,
কিচেন তো নয়, ল্যাব্রেটারি।
সেইখানে তার ফর্মুলাতে
রাঁধছে এখন আলুভাতে।
খাবে না? কার কটা মাথা?
পিষবে জেনো ঘুরিয়ে জাঁতা।
হাজার হলেও ক্ষত্রিয় তো
ক্রোধ আজও ওতপ্রোত।
যক্ষপতি সেই যে কুবের,
আদিপুরুষ রামধনুদের।
আত্মীয়? হ্যাঁ, মেয়ের পিশে
মাঝ বয়েসে হারিয়ে দিশে
বর্তমানে বাস শ্রীঘরে
সাহেব ভরা ভ্যাঙ্কুভরে।
যাহোক, কেমন লাগলো শুনে-
স্বীকার করো, রূপে গুণে
এমন একটা পাত্রী পেলে
বর্তে যাবে তোমার ছেলে।

-কল্যাণ দাশগুপ্ত
২৫১৫১ ব্রুকপার্ক রোড ১৮১৬,
নর্থ ওমস্টেড,ওহাইও ৪৪০৭০

গত সংখ্যায় কবিতাটির নির্ভুল মুদ্রণ সম্ভব না হওয়ার দরুন আমরা দুঃখিত